

दोष कानून में नहीं, इसलागू न किये जाने में है

ब्रिंदा कारत / साबू जॉर्ज

4 फरवरी, 2012

कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ चलाया जा रहा अभियान तब तक प्रभावहीन, बेमानी और सतही ही बना रहेगा जब तक कि पैसा कमाने के लालची डॉक्टरों, नेताओं और नौकरशाहों की मिलीभगत से कानून और इसके प्रावधानों का मज़ाक बनाया जाना बंद नहीं हो जाता ।

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के सदस्यों, फराह नकवी और ए के शिवा कुमार द्वारा 24 जनवरी 2012 को 'द हिन्दू' अखबार में छपे उनके लेख, "भारत और लिंग चयन की दुविधा" में रखे गए इस विचार के प्रति, कि भारत में लिंग चयन को समाप्त करने के लिए एक समग्र नीति की ज़रूरत है, बहुत कम या न के बराबर मतभेद अथवा विरोध हो सकता है। हम सब यह भली भांति जानते हैं कि लिंग चयन कर पाने की तकनीकों का प्रयोग कर कन्या भ्रूण हत्या करने और महिलाओं के अशक्त होने और उनके प्रति आदर में कमी आने के बीच सीधा सम्बन्ध है।

लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि लेखकों ने सांस्कृतिक व्यवहारों से लेकर सामाजिक-आर्थिक दबाव के चलते इस "जटिल सम्बन्ध" की व्याख्या करते हुए समुदायों, जाति-समूहों और क्षेत्रों में लगातार बढ़ती दहेज के मांग का कोई ज़िक्र नहीं किया है जो कि लिंग अनुपात में कमी आने का एक प्रमुख कारण है। मौजूदा आर्थिक नीतियों के कारण लोगों में उपभोक्तावाद बहुत तेजी से बढ़ा है और हमारे सशक्त मीडिया ने भी इसे बार-बार महिमामंडित किया है। हमारे यहाँ 'ऊपर से नीचे की ओर प्रभाव होने' के सिद्धान्त का यही असर दिखाई पड़ता है कि देश के समृद्ध होने के केवल खोखले मानक ही लोगों के मन में घर कर गए हैं और यहाँ किसी व्यक्ति का सामाजिक स्तर केवल इस बात पर निर्भर करता है कि उसके पास विलासीता या ऐशो-आराम के कितने साधन हैं।

### व्यक्तिगत चुनाव का सिद्धान्त

एक और कारण जिसे लेखकों ने 'समग्र' कार्ययोजना का ज़िक्र करते हुए नज़रंदाज़ किया है, वह है सरकारों द्वारा दो ही बच्चे पैदा करने की नीति को अपनाना और बढ़ावा देना। चीन में एक संतान पैदा करने की नीति अपनाए जाने और साथ ही साथ बड़े पैमाने पर लिंग निर्धारण कर पाने की सुविधा उपलब्ध होने का परिणाम यह हुआ कि वहाँ लिंग अनुपात में बहुत अधिक असमानता हो गयी। चीन की सरकार द्वारा, देर से ही सही, इस गलती का एहसास कर लेने और आवश्यक कदम उठाने के सकारात्मक परिणाम अब सामने आने लगे हैं। लेकिन भारत में अभी तक इन अनुभवों से कुछ सीख प्राप्त नहीं की है। आज भी राज्य सरकारें दो बच्चों की

नीति को लागू करने के लिए दबाव और अलोकतांत्रिक तरीकों को प्रयोग में लाती हैं। 'हम दो हमारे दो' के नारे को अक्सर "हम दो हमारे दो लड़के" के तौर पर समझा जाता है। दो ही संतान पैदा करने की नीति को लागू करने के दबाव डालने वाले दंडात्मक कानूनों के खिलाफ संघर्ष, लिंग-निर्धारण के विरुद्ध संघर्ष का ही एक भाग है और किसी भी तथाकथित समग्र नीति के अंतर्गत जनसँख्या नियंत्रण की इन दोषपूर्ण नीतियों में सुधार किये जाने को भी शामिल किया जाना चाहिए।

लेखकों द्वारा सुझाये गए विचार में दोष यह नहीं है कि उन्होंने अपने लेख में दहेज़ प्रथा पर या फिर अधिकतम दो संतान पैदा करने की नीति की आलोचना नहीं की, बल्कि इस पूरे प्रकरण की तरफ उनके दृष्टिकोण में है क्योंकि कानूनों को लागू न किये जाने के महत्व को नज़रंदाज़ या अनदेखा कर देने के कारण कन्या भ्रूण हत्या जैसा कृत्य अपने-आप में अपराधमुक्त बन जाता है। कुछ दशक पहले पश्चिमी देशों के नारीवादी कार्यकर्ताओं ने एक विचार प्रकट किया था जिसे भारत में कुछ हद तक स्वीकार्यता मिली थी कि पैदा होने वाली संतान के लिंग निर्धारण का फैसला एक व्यक्तिगत फैसला होता है। तब ऐसा कहा जाता था कि किसी अनचाही संतान के रूप में लड़की को जन्म देने, जिसे आगे चलकर सारी उम्र भेदभाव का सामना करना पड़े, से कहीं बेहतर है कि लड़की के भ्रूण की गर्भसमापन करवा के कोख में ही हत्या कर जाए। हालांकि लेखकों ने यह नहीं बताया है कि पश्चिमी देशों के इस विचार के साथ उनकी कितनी सहमति है लेकिन वर्तमान नीतियों पर उन्होंने जिस आधार पर अपनी समालोचना को पाठकों के सामने रखा है, उससे निश्चित ही कन्या भ्रूण हत्या को अपराध मानने के बारे में उनके विचारों पर प्रश्न उठ खड़े होते हैं। उनके विचार से समस्या का मूल कारण लिंग निर्धारण की तकनीकों के आसानी से उपलब्ध होना है और उनका मानना है कि कानून बना कर और उन्हें लागू करके इन तकनीकों के आसानी से उपलब्ध होने पर रोक लगायी जानी चाहिए। इसके पीछे उनका विचार यह लगता है कि तकनीकों की उपलब्धता पर रोक लगा देने से लिंग निर्धारण करने के मामलों में भी कमी आएगी लेकिन पूरे लेख में कहीं भी यह पूरी तरह से स्पष्ट नहीं हो पाया है। अपने लेख में उन्होंने कहीं भी साफ तौर पर नहीं कहा है कि कन्या भ्रूण हत्या एक अपराध है जिसके लिए सजा का प्रावधान होना चाहिए।

### **अन्य कारण**

लेखकों का मानना है कि "कानून को लागू किया जाना चाहिए", लेकिन क्या वास्तव में लिंग-निर्धारण के विरुद्ध बने कानून लागू हो पाए हैं? सरकार द्वारा कन्या भ्रूण हत्या के विरुद्ध चलाया जा रहा वर्तमान अभियान केवल सतही तौर पर किया जा रहा ढोंग है क्योंकि सरकार अपने ही बनाए कानून को लागू करने में बुरी तरह से असफल रही है या फिर यह भी हो सकता है कि जानबूझकर इस कानून को लागू नहीं किया जा रहा है। लिंग-निर्धारण की तकनीकों का प्रयोग

कर मुनाफ़ा कमाने वाले कुछ डॉक्टरों और नेताओं व अफसरों के बीच की सांठ-गाँठ के कारण कानूनी प्रावधान केवल मज़ाक बन कर रह गए हैं।

हर वर्ष लिंग निर्धारण करने और लिंग के आधार पर गर्भसमापन कराये जाने के लाखों अपराध होते हैं लेकिन इन लाखों अपराधों के लिए अदालतों में कुछ ही मामले दर्ज किये जाते हैं शायद ही किसी मामले में अभियुक्तों को सज़ा मिलती हो। वर्ष 1994 से, जब गर्भाधान पूर्व व प्रसव पूर्व निदान तकनीक (लिंग निर्धारण निषेध) कानून (PNDT Act) बनाया गया था, तब से आज तक केवल 93 मामलों में लोगों को सज़ा मिली है। इस समय अदालतों में लंबित पड़े 1036 मामलों में से केवल कुछ, लगभग 10 प्रतिशत मामलों में गर्भस्थ शिशु के लिंग की जानकारी दे दिए जाने का आरोप लगाया गया है। इन मामलों में से अधिकतर मामले मेडिकल रिकॉर्ड न रखने या अल्ट्रासाउंड मशीन का पंजीकरण न कराने से सम्बंधित हैं। उन मशहूर हुए मामलों में भी, जहाँ छापा मार कर लिंग निर्धारण किये जाने का पर्दाफाश किया गया था, इसमें लिप्ट डॉक्टरों के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की गयी है। एक दशक तक तो भारत की मेडिकल कौंसिल भी अपने नियमों में बदलाव लाते हुए गर्भ निर्धारण को डॉक्टरों के पंजीकरण को रद्द करने का आधार बनाने से इनकार करती रही थी। 2006 में राजस्थान में एक राज्य व्यापी अभियान के अंतर्गत जब लगभग 25 डॉक्टरों के लाइसेंस निलंबित किये गए, तो वहाँ डॉक्टरों ने मेडिकल कौंसिल के सचिव को ही, जिन्हें वे लाइसेंस रद्द किये जाने का दोषी मानते थे उनके पद से हटा दिया और सभी डॉक्टरों के लाइसेंस निलंबन को समाप्त कर दिया। हैदराबाद में तो चिकित्सा समुदाय के प्रमुख सदस्यों ने डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट की केवल इसलिए पिटाई कर दी थी क्योंकि वे इस कानून को लागू करने की कोशिश कर रहे थे।

हालांकि कानून में साफ़ तौर पर लिंग-निर्धारण की तकनीकों के विज्ञापन किये जाने की मनाही है लेकिन गूगल, भारतीय कानूनों का पालन करने का आश्वासन देने के बाद भी, पिछले तीन साल से लिंग-निर्धारण के लगातार विज्ञापन देता रहा है। सरकार को इसकी सूचना दे दिए जाने के बाद और संसद में इस मामले को उठाये जाने के बाद भी सरकार इस मामले में कोई भी कार्यवाही करने में विफल रही है। जहाँ तक गूगल द्वारा PNDT कानून की अवहेलना किये जाने का प्रश्न है, सरकार गूगल द्वारा मौजूदा गठबंधन के नेताओं के बारे में अपनी वेबसाइट पर अपमानजनक प्रचार के कारण उसके खिलाफ कोई भी कार्यवाही करने से बचती रही है।

इस कानून को प्रभावहीन बनाने और इसे निष्क्रिय करने के कोशिश लगातार होती रही है। लिंग-निर्धारण के विरुद्ध संघर्ष कर रहे आन्दोलन इस कानून को कड़ाई के लागू किये जाने और एक समग्र कार्ययोजना के तहत इसे किसी भी नीतिगत ढाँचे में शामिल करने के लिए सरकार को बाध्य करने की अपनी प्रमुख मांग को अगर छोड़ देंगे तो यह इस आन्दोलन के बहुत ही गलत होगा।

धार्मिक कट्टरपंथी द्वारा कन्या भ्रूण हत्या और 'गर्भपात' के पाप को एक जैसा मानते हुए राजनीति करने का आरोप भी इसी PNDT कानून पर थोपा जाता रहा है। महिला संगठन कन्या भ्रूण हत्या और 'जीवन के अधिकार' को सामान रूप से देखे जाने का विरोध करते रहे हैं क्योंकि ऐसा करने से महिलाओं को गर्भसमापन का अधिकार दिए जाने की मनाही की जाती रही है। यह बहुत ही खेद की बात है कि राज्य सरकारों सहित सरकारी एजेंसियों ने लिंग निर्धारण का विरोध के रूप में इन धार्मिक कट्टरपंथियों और धर्म प्रमुखों को गर्भसमापन के खिलाफ अपने सन्देश फैलाने का एक मंच उपलब्ध करवा दिया है। राजनीतिक रूप से ये गलत फैसले हैं और इनसे किसी स्पष्ट नीति के अभाव का पता चलता है। हमें इसका विरोध करना चाहिए, न कि कन्या भ्रूण हत्या के विरुद्ध बनाये गए कानून और उसके प्रावधानों का ।

### उत्तरदायित्व का प्रश्न

यह एक स्वयं सिद्ध सत्य है कि केवल कानून बनाने मात्र से समाज में से भेदभाव और दमन से जुड़े अपराधों को खत्म नहीं किया जा सकता। तरक्की करने की राह पर अग्रसर भारत में वर्ग, जाति, जेंडर और समुदाय के आधार पर असमानताएं बढ़ती जा रही हैं। चुनी हुई सरकारों को, विविध स्तरों पर इसके लिए उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए। महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए उनके आर्थिक अधिकारों, रोजगार के अधिकार, और निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी के अधिकार पर चर्चा व निर्णय बहुत महत्त्व रखते हैं। नकारात्मक लिंग अनुपात में सुधार लाने के लिए बनार्यी जा रही राष्ट्रीय स्तर के किसी भी नीतिगत ढाँचे में इन्हें शामिल किया जाना चाहिए। यह उन नकद दिए जाने वाले प्रभावहीन प्रोत्साहन से कहीं अधिक लाभप्रद होंगे जिनके बारे में लेखकों ने अपने लेख में सटीक आलोचना की है। लेकिन अंत में, सवाल यही रह जाता है कि क्या गर्भस्थ शिशु का लिंग निर्धारण अपराध है या नहीं? अगर यह अपराध है तो फिर इस कानून का होना भी बहुत ज़रूरी है। केवल लोगों और परिवारों पर निशाना साधते हुए लेकिन अनैतिक डॉक्टरों द्वारा बड़े पैमाने पर किये जा रहे अपराधों को अनदेखा कर और अल्ट्रासाउंड कंपनियों के हितों के बारे में चुप्पी साधने से भारत महिलाओं की आगामी पीढ़ी खिलाफ किये जा रहे इन सामूहिक और नृशंस नरसंहार के क्रम को रोक नहीं पायेगा। कोई भी नीतिगत ढांचा जो कानूनों के पालन की अवहेलना को नज़रंदाज़ करता हो, वास्तविक रूप में समग्र नीतिगत ढांचा नहीं हो सकता।

---

(भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माक्सवादी) के पोलिट ब्यूरो की सदस्य ब्रिंदा कारत और उच्चतम न्यायालय में PNDT एक्ट पर याचिकाकर्ता डॉ साबू जॉर्ज कन्या भ्रूण हत्या के विरोध में अभियान चलाते रहे हैं।)

## **Don't trash this law, the fault lies in non-implementation**

Brinda Karat Sabu George

FEBRUARY 04, 2012 01:15 IST

**The campaign against female foeticide will remain hypocritical and superficial as long as the nexus among profiteering doctors, politicians and bureaucrats continues to make a mockery of the legal provisions.**

There can be little quarrel with the argument that India requires a comprehensive policy to prevent sex selection as put forward by National Advisory Council members Farah Naqvi and A.K. Shiva Kumar in The Hindu (“India & the sex selection conundrum,” January 24, 2012). That the use of sex selection technologies to abort female foetuses is linked to the increasing devaluation and disempowerment of women is well known.

It is surprising however that in the “complex interface” described by the authors, ranging from cultural attitudes to socio-economic pressures, they should have omitted one obvious reason for the skewed sex ratios namely, the rapid spread of dowry demands across castes, communities and geographies. The present framework of economic policies has acted as an engine for crass consumerism glorified by a powerful media. Indeed, the only effect of the trickle-down theory to be seen today is the trickle-down of the shallow values of shining India that determine the status of a person through the ownership of luxury goods. Like a black shadow in the wake of dowry demands, is the spread of sex selection.

### **Personal choice theory**

Yet another reason ignored by the authors in their “comprehensive” strategy, is the coercive two-child policy being promoted by governments. The Chinese implementation of the one-child policy framework along with mass availability of sex determination resulted in frighteningly unbalanced sex ratios. The Chinese government's belated recognition of this is yielding positive results. But India is yet to learn from their experience. Even today State governments use coercive and undemocratic methods to enforce the two-child norm. “Hum do hamare do” is often translated as “Hum do hamare do ladke.” The struggle against coercive laws to enforce the two-child norm is part of the struggle

against sex-determination, and any comprehensive policy must target these faulty population control policies.

But the fatal flaw in the argument is not the omission of dowry or the consequences of the two-child norm, but an approach which tends to decriminalise the act of female foeticide by dismissing the importance of the implementation of the law. There is an opinion that some western feminists put forward decades ago, which found resonance in some circles in India, that sex-selection is a matter of personal choice. It was said that it is better to abort the female foetus than give birth to an unwanted baby girl who will face discrimination all her life. While the authors do not give any indication of agreement with this theory, the grounds of their critique of the present policy certainly do raise questions about their position regarding the treatment of female foeticide as a crime. The main problem according to them has been the focus on the practice of sex selection “seeking to stem the supply of technology... through application of the law. The rationale that stopping supply will reduce the demand ... hasn't panned out as planned.” Nowhere in their article do they describe female foeticide as a crime that should be punished.

### **Other factors**

Has there been any “application of the law” as assumed by the authors? The present campaigns of the [government](#) against female foeticide are hypocritical and superficial precisely because the government has utterly failed to implement its own law or perhaps has deliberately not done so. The strong links between sections of a powerful medical fraternity who make profits through the use of sex-selection technologies and politicians and bureaucrats has made a mockery of the legal provisions.

For every million crimes of sex selection and sex selective abortions annually, only a few cases are filed in the courts and there are hardly any convictions. Since 1994 when the Pre-conception and Pre-Natal Diagnostic Techniques (Prohibition of Sex Selection) law was enacted there have been only 93 convictions. Of the 1,036 ongoing cases, only a small percent, possibly 10 per cent, relate to charges of communication of sex of the foetus. A majority of the cases are for non-maintenance of records and non-registration of ultra-sound machines. Even in cases following widely publicised sting operations of sex determinations, no action has been taken against the doctors concerned. For over a decade, the Medical Council of India refused to change its rules to include sex selection as a ground to delicense doctors. In Rajasthan when the licenses of 25 or so doctors were suspended in 2006, following a Statewide campaign, the Secretary of the Medical Council, who was held responsible for the suspension of the licences by the medical fraternity was removed and the suspensions rescinded. The DM of Hyderabad was

physically assaulted by leading members of the Hyderabad Medical Association because of his efforts to implement the law.

Although the law expressly bans advertisements of sex selective technologies, Google has been advertising sex selection for the last three years after giving a commitment to honour Indian laws. Even though this has been brought to the attention of the government and raised in Parliament, the government has failed to act. The present determination of the government to intervene because of the defamatory images of leaders of the ruling alliance on Google sites, has been sadly absent as far as the violation of the PNDT Act by Google is concerned.

The attempt is to both dilute and subvert the law. It would be an entirely erroneous strategy for movements against sex determination to give up the crucial demand for implementation of the law and to force the government to include this in any official policy framework in the name of a comprehensive strategy.

Even the politics of religious fundamentalists to equate female foeticide with the “sin” of abortions are blamed on the “singular focus on the PNDT Act.” Women's organisations have fought against the equation of the struggle against female foeticide with the “right to live” mobilisations which deny women the right to abortion. It is condemnable that official agencies including State governments have provided anti-sex determination platforms to religious leaders of all hues to spread their reactionary message against abortions. These are politically incorrect decisions which reflect the lack of a coherent policy framework. It is this which should be condemned, not the legal framework against female foeticide.

#### Issue of accountability

It is a truism that the law alone can never rid society of crimes linked to systemic discrimination and oppression. India on a trajectory of exclusive growth is strengthening and adding to inequalities based on class, caste, gender, community. Elected governments must be held accountable at different levels. Issues of women's economic rights, of employment, of rights in decision making are critical in policies to enhance women's status. Any comprehensive national response to negative sex ratios must surely include these aspects which would be of far more use than the incentives being offered through inconsequential cash transfer schemes rightly critiqued by the authors. But, in the end, the question remains: is foetus sex determination a crime or not? If yes, then the law is essential. By only targeting communication to families and ignoring mass crimes committed by unethical doctors and remaining silent on the vested interests of the ultrasound companies, India is unlikely to stop the ongoing genocide against the next generation of women. There can be no

comprehensive policy framework which ignores the gross violations of the law.

( Brinda Karat, a member of the CPI(M) Polit Bureau, and Dr. Sabu George, petitioner in the Supreme Court on the PNDT Act, have been campaigners against female foeticide.)